International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

मृद्पात्र–परम्पराओं के निर्माण की प्रविधि नवीन पुनरावलोकन

डा0 अवध नारायण
प्राचार्य एस0एम0आर0डी0 कॉलेज
हण्डिया इलाहाबाद

समय के उतार–चढ़ाव के साथ कई सभ्यताएँ समाप्त हो गई, परन्तु उनका अस्तित्व मिट्टी के पात्रों के रूप में आज भी जीवित है। इसकी सच्चाई के पीछे भी दो कारण है– पहला कारण तो यह है कि मिट्टी विश्व के प्रत्येक भाग में भरपूर मात्रा में आसानी से मिलती है, तथा दूसरा कारण यह है कि मिट्टी की बनी हुई वस्तुएँ जल्दी से खराब नहीं होती हैं। मिट्टी के बर्तन बनाने के लिए साधारणतया दो प्रकार की मिट्टी उपयोग में आती हैं

प्रस्तर काल का तीसरा और अन्तिम चरण नव पाषाण काल, मानव सभ्यता के इतिहास का वह चरण है, जिसमें एक तरफ मानव पाषाण तकनीकियों को भी अपनाए हुआ था, तथा दूसरी तरफ अपनी अर्थव्यवस्था में आमूल परिवर्तन भी करता हुआ दिखायी देता है जिसे 'खाद्यान्न उत्पादन' के प्रयासों में देखा जा सकता है, जो कृषि तथा पशुपालन की प्रथाओं के रूप के प्रारम्भ व प्रचलित हुआ। खाद्यान्न उत्पादन प्रगति ने मानव इतिहास की दिशा ही बदल दी ।

कठोर चट्टानों की परतें निकाल कर औजार बनाए गए और उनको रेत तथा पानी से घिसा गया। इससे चिकनी एवं चमकदार सिल्ट बनी, जिनकी लकड़ी के मजबूत हत्थों की पकड़ दी गई। इसका सम्भावित उपयोग माना जाता है। विद्वानों के एक वर्ग का मानना है कि यह प्रारम्भिक हल के रूप में प्रयोग किया जाता है। और दूसरे वर्ग के विद्वानों की धारणा है कि यह प्रारम्भिक हल के रूप

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

में प्रयोग किया जाता था तथा तीसरे वर्ग के अन्य विद्वानों का कहना है कि इनको अनछुए जंगलों को साफ करने के लिए उपयोग किया जाता था ताकि उस जगह को कृषि क्षेत्र के रूप में प्रयोग किया जा सके। इसके अतिरिक्त नव पाषाण काल के क्षेत्रों में गोलाकार पत्थर और बोलास इत्यादि मिले है।

भारतीय उपमहाद्वीप के नव पाषाण युग में कई क्षेत्रीय विभिन्नताएं पाई गई सबसे महत्त्वपूर्ण स्थलों में मेहरगढ़ उत्तरी–पश्चिमी भाग में किले गुलमुहम्मद, कश्मीर में बुर्जहोम और गुफराल, विन्ध्य क्षेत्र में कोलडिहवा, चोपनी–माड़ो और महगड़ा, चिराँद, पूर्वी भाग में पाण्डु–राजार–ढिवी, कुचाइ और गोलाबाई साशन और उत्तरी–पूर्वी भाग में दओजली हैड़िग और सेलबागिरी।

नव पाषाण काल के मृद्–भाण्डों में दो गढ़न तकनीकियों का प्रचलन सामान्यतः दिखाई देता है। एक तो हस्त–गढ़न तकनीक, दूसरी मध्यम गति चाक (टर्न टेबुल टेकनीक) द्वारा निर्माण प्रक्रिया। इनके अतिरिक्त तीव्र चाक का प्रयोग भी बाद के चरणों में पात्रों के निर्माण में किया जाने लगा, जिसको तीसरी प्रकार की तकनीक माना जा सकता है। इन सभी विधियों में गढ़न से पूर्व मिट्टी की तैयारी आवश्यक थी।

मिट्टी को भली प्रकार गूँथ लिया जाता था और उसको छोटे–छोटे लोदो में विभाजित कर लिया जाता था। इनमें से आदितम तकनीक में हाथ से पात्र का आकार गढ़ा जाता था, परन्तु बाद में मध्यम–गति के चाक एवं साधारण चाक पर भी पात्रों का निर्माण किया जाने लगा। इन पात्रों को तकनीकियों के आधार पर हस्त–गढ़ित, मध्य–गति चाक निर्मित तथा चाक निर्मित तीन वर्गो में विभाजित किया गया।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

कच्चे पात्रों को आँच में पकाने से सुदृढ़ तथा लम्बी अवधि तक उपयोगी बन जाते हैं। यह बात नव–प्रस्तर काल के मानव को ज्ञात थी, परन्तु पात्रों को पकाने में पूर्ण दक्षता इस काल के अधिकतर अवशेषों से प्रमाणित नहीं है क्योंकि अधिकतर मृद्–भाण्ड कम और अनियन्त्रित आँच में पके दिखते हैं। इसका आभास पात्रों की धूमिल लाल व गेरू या सिलेटी सतह और अधपका, धुआँ लगा धूसर एवं काले किनारों के मध्य भाग से होता है। मिट्टी के पात्रों के पकाने की आदितम विधा खुले आँवों का प्रयोग है। इस विधा में प्रत्यक्ष आँच और विपर्यस्त दशा का एक साथ प्रयोग प्रत्येक पात्र पर किया जाता था। पात्रों को पकाने की इस परम्परा का अस्तित्व नव–प्रस्तर काल में सम्भवतः समकालीन सुसंस्कृत वर्गो से सम्पर्क का परिणाम था।

अधिकांश मृत्तिका–शिल्प के विद्वानों का मानना है कि सजावट की वस्तुएँ, वाटर कूलर्स, फूलदान आदि बनाए जाए। अब प्रश्न यह है कि इस प्रकार की वस्तुएं जितनी मात्रा में तैयार की जानी चाहिए और इस प्रकार के विविधीकरण से कितने कुम्भकारों को लाभ होगा? उल्लेखनीय है कि कई तकनीकी सुधारों के पश्चात् अब भी कई कठिनाई तथा तकनीकी समस्याएं सामने आती हैं, जिनका समाधान तत्काल करना आवश्यक है।

यद्यपि ग्रामीण अंचलों में पारम्परिक कारीगर के रूप में कुम्भकार का उल्लेखनीय और महत्त्वपूर्ण स्थान है। तथापि नई तकनालॉजी के आने के पूर्व पारम्परिक तकनीक एवं सांस्कृतिक प्रयोग में लगे ये कुम्भकार अनादि काल से ही हमारी अर्थव्यवस्था के रीढ़ रहे है। अतः पारम्परिक ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उनकी भूमिका गांव को एक स्वावलम्बी इकाई बनाने में रही है।

वस्तुतः ग्राम सामाजिक जीवन का वह स्थल होता है, जहाँ कुम्भकार परिवार अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करता है। इस कड़ी में उल्लेखनीय है कि अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) के ग्रामीण जीवन, पारस्परिक सहयोग (सहकारिता) एकता तथा प्रेम और अपनत्व की भावना पर आधारित है।

उपरोक्त अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) वर्तमान समाज में कृषक समाज (कुम्भकार) में उल्लेखनीय परिवर्तन हो रहे हैं। वे औद्योगिक समाज की विशेषताओं को ग्रहण करने की प्रक्रिया में संलग्न दिखाई पड़ते हैं। शिक्षा के प्रसार, यातायात तथा संचार के साधनों के विकास और राजनीतिक जागरूकता के प्रभाव से इस समुदाय में भी...।किन्तु अभी भी वे औद्योगिक या नगरीय समाज की तुलना में अति सरल और स्वाभाविक दिखाई देते हैं।

मिट्टी में रेत आदि की मिलावट होने के कारण उसे पकाने के लिए अलग–अलग तापमान और ताप की आवश्यकता होती है। पकाने की सुविधा के अनुसार मिट्टी का चुनाव करने के अतिरिक्त उससे बनने वाली वस्तुओं के अनुसार भी मिट्टी का चुनाव कुम्भकार करता है। उदाहरणार्थ बर्तन यथा नाँद, खाना–पकाने के बर्तन आदि बनाने के लिए काली मिट्टी और छोटे बर्तन यथा– दीपक, प्यालियाँ आदि बनाने के लिए पीली मिट्टी काम में आती है। उल्लेखनीय है कि मूर्तियाँ बनाने के लिए जो मिट्टी उपयोग में आती है, उसका रंग सफेद, भूरा या लाल होता है।

प्राचीन विधि

प्राचीन काल के लोग आजकल की प्रचलित विधि से बर्तन बनाना नहीं जानते थे। वे जमीन में गड्ढ़ा खोदकर राख बिछाते और पुनः चारों और मुलायम मिट्टी की सतह लगाकर बर्तन बनाया करते थे। तत्पश्चात् टोकरी के अन्दर या बाहर

मिट्टी थोपकर बर्तन बनाने लगे। इस विधि का प्रयोग आजकल भी कुंडे, सुराही और खिलौनों को बनाने में किया जाता है। आजकल परम्परागत चाक की अपेक्षा साँचे के द्वारा भी तैयार कर लिया जाता है, और उसमें मिट्टी की परत लगाकर बर्तन के आधे–आधे भाग तैयार कर मिट्टी के बर्तनों को चमड़े की तरह कठोर (लेदर हार्ड कंडीशन) में क्ले पेस्ट बनाकर उन मिट्टी के बर्तनों को जोड़ लिया जाता है ।

1. कुण्डली–कृत–पद्धति : सम्भवतः प्राचीन समय में भण्डार पात्रों को बनाने में कॉइलिंग तकनीक का उपयोग हुआ होगा। कलाकार मिट्टी के पतली–पतली बत्ती बनाकर उनको एक के ऊपर एक रखकर जोड़ते हैं और बीच में अपनी उँगलियों को इस प्रकार रखते हैं कि अन्दर से पात्र खोखला रहता है।

2. दबाव–पद्धति (हाथ से गढ़ाई) : आमतौर पर मिट्टी और चिकनी मिट्टी से पात्रों की गढ़ाई का जाती है। इस पद्धति में कार्य करते समय कुम्भकार अंदर से बाहर तक अपने हाथ से कार्य करने की स्वतंत्रता होती है।

इस प्रक्रिया में कुम्भकार मृद्पात्र को अपनी इच्छानुसार बदलाव ला सकता है और टूट–फूट को ठीक कर सकता है। उल्लेखनीय है कि मिट्टी के बर्तनों की सतह को गीला करके उन पर अनेक प्रकार से रँगतें एवं डिजाइनें बनाने की अनन्त संभावनाएँ हैं, जिसके लिए ऊपर से मिट्टी को ही दबाकर या छापकर आकृति बनाते हैं । गीली मिट्टी के पात्र पर कुम्भकार मन चाहे चित्रण–अभिप्राय भी संजोते हैं।

इस प्रकार प्राचीन मृद्पात्रों का आज के मृद्पात्रों से तुलनात्मक अध्ययन करके उनमें प्रयुक्त प्रविधियों का पता लगाया जा सकता है। मिट्टी के बर्तनों की सतह पर तैयार करना जैसे धावन तथा विसर्पण एवं विविध प्रकार के रंगों से कर्तन

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

विधि एवं ''एप्लीके'' विधि द्वारा बर्तनों को अलंकृत करने की प्राचीनतम प्रविधियों के विषय में भी हम आज के लोक/साधारण समाज के प्रयुक्त प्रविधियों से जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

मिट्टी के बर्तन बनाने के उपकरण और उनकी सामग्री : चाक द्वारा बर्तन बनाने के लिए कोई विशेष उपकरण की आवश्यकता नहीं होती हैं। अच्छी तरह और आसानी से घुमाई जाने वाली चाक के अतिरिक्त एक लम्बा तार जो चाक से बर्तन उतारते समय उसे काट कर अलग करने के काम आता है । मॉडलिंग टूल्स, जो बर्तन पर सजावट के लिए धारियाँ आदि डालने के काम आता है, एक चाकू जिसमें तली आदि स्थानों से अतिरिक्त मिट्टी निकाली जाती है। इस प्रकार के उपकरणों की विशेष आवश्यकता होती है। इस पृष्ठभूमि में अन्य आवश्यक सामग्रियों का स्वतंत्र उल्लेख किया गया है।

कुम्भकार का चाक : चाक, जिस पर बरतन बनता है, दो भाग होते हैं– एक नीचे का, दूसरा ऊपरा का। एक गोल पत्थर जिसका वृत्त प्रायः 111 फुट रहता है। पृथ्वी में गाड़ दिया जाता है। इसके बीचों बीच एक खूँटी जो पुराने इमली के पेड़ के तने की लकड़ी की होती है, पत्थर में छेद करके ठोक दी जाती है। इसी खूँटी पर ऊपर का पत्थर घूमता है, एक कारण इसे खूब पक्की लकड़ी का बनाते हैं। ऊपर के पत्थर का वृत्त प्रायः 4 फुट रहता है। यह भी गोल रहता है। इसकी मोटाई 111 इंच से अधिक नहीं रहती और इसके ऊपर के भाग में एक रेखा कोर के पास बनी रहती है और बीच में एक गोल आकार का सूत उठा हुआ पत्थर में नीचे की ओर एक छेद रहता है।

प्रायः आजकल कुम्भकार तीन प्रकार के बर्तन बनाते हैं एक सादे, दूसरे रंगीन और तीसरे चमकदार। सादे मिट्टी के बरतनों का रंग पीला, भूरा या सिलेटी

रहता है। रंगीन बरतनों का रंग चमकता हुआ लाल रंग का होता है और चमकदार बरतन चुनार (जनपद–मिर्जापुर), उत्तर प्रदेश के बरतनों की भाँति चमकदार रहते हैं। चमकदार बरतन प्रायः हरे, नीले, भूरे, काले रंग के मिलते हैं।

इस कड़ी में उल्लेखनीय है कि अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) के पुश्तैनी कुम्भकार गंगा घाटी से प्राप्त चिकनी मिट्टी को अपने हाथों द्वारा गूँथकर तैयार करते हैं और पुनः उन्हें अपने सधे हाथों से मृद्पात्रों का सुघड़ आकार प्रदान करते हैं। विभिन्न पदार्थो जैसे विभिन्न प्रकार की मिट्टी, धातु और प्राकृतिक रंग आदि भी प्राचीन काल की भाँति मिश्रित कर प्रयोग किए जाते हैं।

कई सामाजिक–आर्थिक लाभों से मुक्त होने के कारण जजमानी प्रथा भारतीय हिन्दू कुम्भकार समाज में बहुत दिनों तक कायम रही और समाज को सुदृढ़ व्यावसायिक एवं आर्थिक आधार प्रदान किया। स्वतंत्रोत्तर काल में समर्थ उच्च जातियों के लोग कुम्भकार जैसे सेवी जाति का शोषण करने लगे। जजमान जो सेवी जातियों के अभिभावक के समान थे। उनके शोषण से सेवी जातियों में असंतोष फैलने लगा, क्योंकि पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त धन उनकी जीविका के लिए पर्याप्त नहीं होता था। वस्तुतः जाति प्रथा के लगभग सभी दोष जजमानी प्रथा में भी पाए जाते हैं, क्योंकि वह मूलतः जाति प्रथा पर ही आधारित उसी का एक रूप है।

1. पाल, जे0एन0 (1994): मेसोलिथिक सेटेलमेंट इन द गंगा वैली, मैन एण्ड इनवायर्नमेन्ट, वाल्युम–19, पृ0सं0–95–101.
2. दुबे, ए0के0 (2005): मध्य गंगा घाटी में अधिवास प्रक्रिया, जौनपुर जनपद के विषेष संदर्भ में, स्वाभा प्रकाषन, इलाहाबाद.

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 15
November 2017

3. लाल, मक्खन (1989): सेटलमेन्ट पैटर्न एण्ड राइज ऑफ सिविलाइजेषन इन मिडिल गंगा–यमुना दोआब, नई दिल्ली.

4. उत्तर प्रदेष शासनः सूचना पुस्तिका 2014 से साभार.

5. दुबे, ए0के0 (2005): मध्य गंगा घाटी में अधिवास प्रक्रिया, जौनपुर जनपद के विषेष संदर्भ में, स्वाभा प्रकाषन, इलाहाबाद.

6. पाण्डेय विमल चन्द्र :प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, शारदा पब्लिकेषन इलाहाबाद।